प्राक्कथन

कविता सवाधिक सवदनशील विधा हैं और रचनाकार जब शब्द को उसकी आत्मा क साथ पकड कर अपन चिन्तन का व्यक्त करता हैं सम्पूण शक्ति क साथ ता रचना जीवन्त हा जाती हैं। उसकी उम्र कितनी हागी इस पर आलाचक जा चाह कहें पर उसका निर्धारण ता समय ही करगा। वैंस भी हिन्दी मे आलाचना का जा स्तर और दष्टि रही हैं वह कही भी किसी भी बिन्दु पर सन्तुष्टि नही देती। खैर।

सुरेन्द्र चतुर्वेदी का यह दूसरा सग्रह हैं। पहला कविता सकलन था और यह गजल सग्रह।

मरा सकलन क शीषक स इतफाक नही हैं। सिफ इसलिए कि मरी व्यक्तिगत मान्यता हैं कि सुरेन्द्र दद की बात कर सकत हैं उस दख सकत हैं गहर तक उस छू नहीं सकत। क्योंकि प्रारम्भ में ही उन्होंन कहा हैं कि 'बाझ मैंन जिन्दगी का अब तलक ढाया नहीं।' व व्यग्यकार हैं और इस दष्टि स मैं इनका सम्मान करता हू। हिन्दी में अत्यधिक कमी हैं व्यग्य रचनाकारों की और जब काइ युवा अपनी सम्पूण तजस्विता क साथ व्यग्य का आधार बनाता हैं ता एक बडी बात हैं मरी दष्टि में। गद्य मे ता तीन चार नाम हैं। पर पद्य मे लगभग नही हैं। हास्य क नाम पर भी फूहडपन ही अधिक उजागर हा रहा हैं।

इस नात मैं सुरेन्द्र का इस गजल सग्रह क अवसर पर स्वागत करता हू और विश्वास करता हू कि उनकी तल्खी गम्भीर स्वरूप लगी।

— प्रकाश जैन
सम्पादक 'लहर'

अब तलक ढोया नहीं।

लाख विचलित हो गया
पर पथ कभी खोया नहीं।

जाने कितनी बार मरी,
यह ज़ुबाँ खींची गई।

दर्द से बुत हो गया
लेकिन कभी रोया नहीं।

अपनी प्रीति बहन को

आभार

स्व सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

बाबा नागार्जुन

मुद्रा राक्षस

मोहन स्वरुप चढढा

अनुक्रम

गजल–1

लोग उस बस्ती के यारो, इस कदर मोहताज थे
थी जुबां खुद की मगर, मांगे हुए अल्फाज थे।

कांच की ओढ़े खड़ी थी, उस शहर की रौशनी
जिस शहर के लोग सब के सब निशानेबाज थे।

वह सड़क थी या तवायफ का कोई अहसास थी,
जिस सड़क पे आते-जाते लोग बे-आवाज थे।

लौट कर आए नहीं खुशियां जो लेने को गए
वो किसी अंधे सफर का बेरहम आगाज थे।

आदमी होते तो चेहरा छील कर पहचानते
उस शहर के लोग किन्तु सिर्फ कच्ची प्याज थे।

'सूद' को हम ब्याज से फांसी के फंदे तक गए
मर गए वो सूद थे जो बच गए वो ब्याज थे।

काफिए थे वो मेरी गजलों के यारो सब के सब
जिनके हर लम्हे में शामिल दर्द-के अन्दाज थे।

गजल–2

कटवा रहे है आजकल वो उस जुबान को
कहने जो लगा गर्म है अपनी दास्तान को।

है दूर काफी इस शहर से मन के मोहल्ले
फिर भी सुरंगे जोड़ती है हर मकान को।

धूप से डर रहे हैं सिर सीमेन्ट के जंगल
अब खोज कर लाएँ कहा से आसमान को।

है हर नजर अंधी जुबा गूंगी है जो यारो
कुछ भी सुनाई अब नही देता है कान को।

खेतो को डस गई थी कल बारूद की नागिन
अब तक न चल सका पता अनपढ किसान को।

है मर चुका सब कुछ मगर जिन्दा खडी है लाश
जैसे चुका रही है वो बाकी लगान को।

ग़जल-3

चलते-चलते जिस जगह, सहरा नजर आने लगे
हाथ में दरिया उठा को प्यास दिखलाने लगे।

लोग तब रटने लगे, कानून तोते की तरह
जब उन्हें मतलब सलाखों का वो समझाने लगे।

जिस गली में जानवर के गोश्त का बाजार था,
उस गली में आदमी को भून कर खाने लगे।

दोस्तों से बेखबर वह शख्स इतना हो गया
दोस्त खुद सीने में उसकी जड़ कटवाने लगे।

शोर-गुल चारों तरफ जिनकी खिलाफत में उठा
लोग वो भी भीड़ में जाकर के चिल्लाने लगे।

मकबरों में खोज को जब थक गए इन्सानियत
मैकदे में उम्र अपनी जाके दफनाने लगे।

गजल—5

मागो को मनवाने म नाकाम हो गए हम
आदोलन करते-करत 'आमाम' हो गए हम ।

बरगद के पेडा के नीचे घास नही उगती
मौसम पर बवजह लगा इल्जाम हो गए हम ।

बाप हुआ सेवा निवृत्त और बटा बेरोजगार
वनवासी भूखी पीढी के राम हो गए हम ।

कुर्सी की छाया मे पल कर बडे हुए सम्राट,
भूख पटा स निकला पैगाम हो गए हम ।

बस्ती के हत्यार देखा ममद' पहुच गए,
फुटपाथा की खाक छान नीलाम हो गए हम ।

गजल–6

गर रेत इस दरिया की उफान के लिए है
फिर कौनसा दरिया जो नहाने के लिए है।

यह हँसता हुआ आज के इन्सान का चेहरा
लगता है नुमाइश में दिखाने के लिए है।

इस शहर में प्यासे को मयस्सर नहीं पानी
सड़कों पे मगर खून बहाने के लिए है।

ये वेद, ग्रंथ गीता और कुरान बाइबिल
बस अपना अपना चेहरा छिपाने के लिए है।

जो खान के सीना खड़ा है गांधी मार्ग पर
गोली नहीं कुर्सी कोई पाने के लिए है।

दुःख-दर्द इस जमीन का खामोशी गगन की,
जैसे गजल में लिख के सुनाने के लिए है।

गजल–7

ऐंठ र र लाग कुछ वकीना मे
उम्र गो जो गए ग्लोलो म।

उस मुसाफिर ने प्याम स डरकर
होठ दफना दिए है टीलो म।

वह कमत आदमी क अ दर था
हम जिसे ढू ढ त थे भीला म।

या खुदा किस जगह प मस्जिद है
आदमी इक नही है मीला म।

टाग कर लाग उस मसीहा को
जाने क्या ढू ढत हैं कीला म।

गजल–9

पछी पिंजरे मे जब निकलता है,
जाने क्या ग्रासमा को खलता है।

वक्त ! इतरा न ग्रपनी ग्रादत पर
ऊट भी करवटें बदलता है।

ग्राग उसकी वहाँ गई याग,
ग्रब ता वा बफ सा पिघलता है।

जिसके ग्रन्तर म इक समदर है
वह भी ग्रब थूक ही निगलता है।

वह दिया रोशनी नही दता
जो कि जधा क ग्राग जलता है।

ग्राईना ग्रथहीन हा जाता,
ग्रादमी जब भी खुद स मिलता है।

गजल–10

प्रागरा बरन इम जमान का
घर रा निरल है प्राजमान का।

वुभन गीपक हजार थ लेकिन
घर मग हा मिरा जलार का।

प्राधियां पूछती है बरगद स
है घरौदा कभी प ढान गो।

व न मंदिर म इस रहनग था
कौन जाना उस थचान को।

सुबहा भटक ता शाम का लौट
घर ही बहतर था फिर ठपान का।

क भातर हजारा पछो थ
बाज लकिन मिला उडान को।

गजल—11

जिम ग्रादमी को खाजते थे वो मकान म,
वह ग्रादमी ता उड रहा था ग्राममान म।

ग्रावाज व-ग्रमर मरी हाती ही जा रही,
क्या नुक्स है बता‍य मर बयान म।

मुर्दों का लादता हुग्रा इठला रहा था वा
जैसे वही था ग्रादमी पूर जहान म।

बजर जमी प मीला तनक सब्ज घाम थी
थ खून के निशा मगर हर ढलान म।

गाडी गई जा बोल ता रोन लगा मलीब
गूगा न दी मदा मगर बहरा क कान म।

मन्नाटा खा गया शहर, भूचाल पी गया
जब बचन लग कफन मुर्दे दुकान म।

गजल–12

आग क साथ जला आग जलान वाला
अब कहा आएगा वा आग उठान वाला।

अब भी दहशत म परशान है पूरी बस्ती,
रसिया छाड गया आग लगान वाला।

रोशनी गिरती नजर आई जो कल रात म
एक अंधा ही मिला उसको उठान वाला।

उम्र सारी थी अंधेरों म उजाला क लिए
पास मरघट क मिला राह दिखान वाला।

आईना खौफ म कुछ दर तो कांपा होगा
एक पत्थर जो मिला साथ निभान वाला।

दायरों की ही तरह चलता रहा पानी म,
किस तरह भटका था वो नाव चलान वाला।

गजल–13

उडा के ल गई हवाये वहाँ वहाँ मुभको
नहीं था जाना कभी भी जहा-जहा मुभको।

बसी हुई थी वहा खुशनुमा सी बस्ती मगर
वहीं नजर नहीं आया मरा मका मुभको।

ये माना आग कुछ अन्दर न थी मग लेकिन
दिखाइ क्या देता था बाहर य धुआ मुभको।

थी कुछ तो पहले ही आवाज बे असर मेरी,
बना गए है कुछ हालात बेजुबा मुभको।

मेरी जमीन ही वापस दिला हवा मुभको
क अब न चाहिए कोई भी आसमा मुभको।

हवा म उडन हुए कोई चीज थामी थी
वो द गया है गरबा मगर वहा मुभको।

गजल–14

नाम तक लेना वहाँ मरने से बदतर था कोई,
जिस फसाद के यहाँ घायल कबूतर था कोई।

भीड़ में जो कल कुचलकर मर गया उस शहर के
हाथ में आटे का इक खाली कनस्तर था कोई।

केंचुली इक साँप की लोगों के बीचों-बीच थी
हर किसी के हाथ में भारी सा पत्थर था कोई।

उस तरफ धुआँ उठा तो लोग चिल्लाने लगे
क्या हुआ मालूम क्या, सबका यह उत्तर था कोई।

नींद हमको आखिरी आई तो मान के लिए
धीकरा की लकड़ियों का एक बिस्तर था कोई।

गजल–15

दिन भर हम बनते है, शाम टने ढहत हैं
दद वा घरौंदा है, जिसम हम रहत है।

लौट गए साहिल प कश्तिया वा रखकर के
रेत क समदर को दरिया जा कहत है।

लाग ता मकाना की छत जम नाते हैं
सूख म थमत हैं बारिशा म उहत हैं।

फट हुए मोजा न जूता स यह पूछा,
क्या दुख पैगबर भी हम जितना सहते है।

गजल–16

यह कौन तीर बन कर उतर गया है मुझमें,
यह कौन हादसा सा गुजर गया है मुझमें।

उसकी शिनाख्त अब तक मैं कर ही नहीं पाया,
वो कौन शख्स था जो कि मर गया है मुझमें।

जो आंधी बन के आया वो जी रहा है मुझमें
जो घरौंदा था वो कब का बिखर गया है मुझमें।

वो नाम था या कोई नाजुक सी गज़ल सा था
जो नक्श बन के अब भी उभर रहा है मुझमें।

बेताब हूँ मैं अब भी यह जानने के खातिर
है कौन सा फसाना जो ठहर गया है मुझमें।

गजल—17

बस्ती मे कोई गुजरा जब आरा लिए हुए
भूखे बच्चे हँसे मगर सन्नाटा लिए हुए।

चिमनी के धूएँ न थक कर अम्बर को देखा,
बाज जहा उडता था इक, फर्राटा लिए हुए।

निगल गया अजगर औरत तब जगल यूँ बोला,
अब तो आयगा वह भी खर्राटा लिए हुए।

ले आया वह एक तराजू [illegible] तोलन की,
जख्म मगर हर बार तुले थ घाटा लिए हुए।

गया खोजने था वह अपने भीतर का हीरा
लौटा पर वह खून सना इक काटा लिए हुए।

गजल-18

था वाग उनको मिल गया बस्ती जलाने को
जो थे बहाना ढूँढते थे दिन लगाने को।

वो टूट कमर को सफर बन कर रह गए
था शौक जिनको हर अँधेरे आजमाने को।

हर शख्स रोया बिलखिला मिल कर हिमालय से
आगे नहीं था जो कभी भी गिड़गिड़ाने को।

वो बेवजह ही जी रहे हैं दुनिया बन कर
जिनको नशा था एक दिन ईसा कहाने को।

था वो अगर ज्वालामुखी तो क्यों नहीं धधका
क्या हो गया अभ्यस्त वह आँसू जमाने को।

जो आँधियों को ब्याज पे न करके आए हैं,
टका उन्हीं को मिल गया है घर बनाने को।

गजल—19

दर्द बच्चों की तरह बढ़ने लगे
आँसुओं की पीठ पर चढ़ने लगे।

गोद में खरगोश फिर बच्चों से जो
जीतने की शर्त पर अड़ने लगे।

अब दवाओं का असर होता नहीं
जख्म पत्थर की तरह सड़ने लगे।

पक्षियों का फिर कहीं पिंजरा खुला,
देखिए ये बाज फिर उड़ने लगे।

ले के आए हैं वो तब संजीवनी
जबकि मुर्दे कब्र में गड़ने लगे।

बाँध राखी औरतों के हाथ में,
चूड़ियों को मर्द हैं लड़ने लगे।

क्या पता क्या लोग जा कर उस जगह,
गाते-गाते गालियाँ पढ़ने लगे।

गजल–20

मछली के हक में वो नीर हो गए है क्या ?
मरते ही मछुआरे पीर हो गए है क्या ?

नाली में उमन फिर फेंक दिया रिश्ता को,
बिल्ली की जूठी वो खीर हो गए है क्या ?

देवदार वृक्ष तले अजगर ने लूट लिया
भग्न उस हिरणी की पीर हो गये है क्या ?

देखने का नंगापन दोस्त सभी आतुर हैं,
द्रोपदी का यारो हम चीर हो गए है क्या ?

शब्दों के खंडहर में भाषा ये सोच रही,
सम्बोधन जहर बुझे तीर हो गए है क्या ?

गजल–21

रखी बहुत फहरिश्त है जिनके गुनाहों की
करने लगे है वो वकालत बेगुनाहों की।

बंधे तो है हर हाथ में रूमाल मौसम के
पर सामने उनके खड़ी साजिश हवाओं की।

कोढ़ी हुआ है इस कदर उस शहर का कानून
थाने दुकान बन गए है अब गवाहों का।

है कांच की खुशियां व आग दर्द की चट्टान
जिसके नहीं है पास गुंजाइश गुफाओं का।

है इस कदर शासन वहां पर बुतपरस्ता का
पत्थर बना रहे है अब बस्ती खुदाओ की।

गजल—22

आँख होने लगी नम सजल गाँव की
दाग दिखने लगे जब गजल गाँव की।

लुटा औरत को जिस दिन गया शहर में
वो ये बोली कि मैं हूँ फसल गाँव की।

वह अदालत थी या था कसाई का घर
कट रही थी जहाँ पर नसल गाँव की।

हाथ दीपक पे रख उल्लुओं ने कहा
रोशनी हम गए हैं निगल गाँव की।

पास उसके शहर की कई खान थी
कोरा सूरत मैं दूँगा बदल गाँव की।

राजधानी में धुआँ सा उठने लगा
आतें जब आई बाहर निकल गाँव की।

गजल—23

पहरुग्रों की ग्राजकल कैसी यह ग्रादत हो गई
गोलियां मालिक पे दागी बस हिफाजत हो गई।

मैमन घर से उठा कर भेडिए जो ले गए,
देख लो उन भेडियों तक की जमानत हो गई।

काटो-फाड़ो या जलाग्रो देश के संविधान को
फसल जवे हैं ग्रब, बहरी ग्रदालत हो गई।

फेफड़े भी खून पर विश्वास ग्रब करते नहीं
जिस्म के भीतर भी देखो ग्रब बगावत हो गई।

मर गए सिद्धान्त सारे ग्रात्मा तक बिक गई,
धर्म गद्दी किन्तु उनकी फिर सलामत हो गई।

मन्दिरों में बैठ कर बचा दिए इस देश को,
मां की गाली से भी बद उनकी इबादत हो गई।

गजल—24

जब स न नावानन हा गए है
साम क हम महल हो गए है।

भीन जर स उहान है छाडी
काच क हम कमल हा गए हैं।

कल तनक वो हमी म थ जिन्दा
दूर जा आजकन हा गए है।

रत म हम हिरणा जैसे भटके
रस्ने ग्हाबन्न हा गए है।

वो बरस भी कट एक पल म
ये बरस जस पन हा गए है।

हम मरन म कठिन हा गए और
व कठिन म सरल हा गए है।

कल तलक ता हमी गगाजल थ,
आज हम ही गरल हा गए है।

उनकी आखा म डूबा हुई भी,
दर की हम कमल हा गए है।

व असल थ अभी भी असल हैं
हम असल से नकल हा गए हैं।

भूल बठ है व जिसका गा कर
हम वया एसी गजल हा गए है।

गजल—28

जिन्दगी सब जी रहे हैं इक पहेली की तरह,
अपने पुरखों में मिली सूनी हवेली की तरह।

हम निरक्षर ही सही पर ज्योतिषी से कम नहीं
पढ़ लिया करते हैं चेहरे हम हथेली की तरह।

नाम पर खुशबू के उनके पास में बच्चे तो हैं
खिल नहीं सकते हैं जो जूही चमेली की तरह।

उस शहर की हर गली कितनी विवश थी उन दिनों
जिन दिनों जलकर मरी थी वह नवेली की तरह।

उस नदी के पास में टूटी हुई जो नाव है
है सुहागिन की किसी विधवा सहेली की तरह।

गजल—29

इस शहर का अब कोई हमदम नही क्या बात है ?
मौत पर इसकी कही मातम नही क्या बात है ?

हर गली के छोर पर दरख्त खडे है दर्द के
मुस्कराता अब कही मौसम नही क्या बात है ?

जो नदी तुमसे निकल कर पहुचती थी मुझ तलक
उस नदी का अब कही सगम नही क्या बात है ?

जो दिया जलता रहा था आधियो के सामने,
उस दिए की लौ मे अब कुछ दम नही क्या बात है ?

जो हमे उपदेश देते थे हिमालय की तरह
आज वे अपनी जगह कायम नही क्या बात है ?

खून से तुमने लिखी थी रोशनी की जो गजल
उस गजल की अब कोई सरगम नही क्या बात है ?

गजल–20

इक राजा के बुरे दिनों की हम पहचान हुए,
इक-इक करके सब शुभचिंतक अन्तर्ध्यान हुए।

जुड़े और फिर जुड़कर टूट अपने हर रिश्ते,
बिना पिता की बेटी के हम कन्यादान हुए।

कुछ सीलन कुछ घुटन और कुछ मकड़ी के जाले,
बंद अंधेरे खंडहर के हम रोशनदान हुए।

भूखा मुन्ना नंगी टुन्नी तार - तार पत्नी
फटी हुई उनके नौकर की हम बनियान हुए।

उजियाला के शिविर लगाकर बैठ गए अंधे
और सूरज की खोज में निकला हम अभियान हुए।

अपने ही आंगन में उसने गाड़ दिए बच्चे
कितने महंगे इस दुनिया के कब्रिस्तान हुए।

गजल—30

राजपथ पर जब कभी इन्आम आता है
आदमी फुटपाथ का ही काम आता है।

भेड़िया की आदत इतनी अहिंसक है,
हर जुबा पर ममता का नाम आता है।

एक अधे गाव का सूरज निवासी है
अब कहा उस गाव का पैगाम आता है।

किसलिए शरमा गए बाजार में आकर
बेचने सीता यहा खुद राम आता है।

साप से लिपटे रहे कुर्सी के पावा पर,
जैसे उनका बस यही एक काम आता है।

कौन जाने डाकिया किस द्वार आ जाए,
खत बगावत का बड़ा गुमनाम आता है।

गजल—31

तुम्हे गर जोर अपने बाजुओ का आजमाना है
तो तुमको तैर कर खुद घाट के उस पार जाना है।

ये चेहरा आदमी का वो कहीं से ले तो आए हैं
मगर दस्तूर उनको जानवर का ही निभाना है।

जहा पर जिन्दगी त्यौहार जाकर के मनाती है,
वहा कुछ लाशो का मौत का मजमा लगाना है।

किसी ने मसखरो की इसलिए बस्ती बसाई है
वहा मरने से पहले क्योकि सबको मुस्कराना है।

वहा के आदमी के नाम तक से थरथराते हैं
वहा सिर मूसलो के सामने उनका उठाना है।

जिन्हे आवाज अपनी तक सुनाई दे नही पाती
बडा अफसोस उनके सामने दुखडा सुनाना है।

गजल-33

टूटे हुए मकान की गिरती दीवार पर
कुछ लोग खुश होने लगे सूरज उतार कर।

छप्पर को फाडकर खुदा देगा य सोच कर
इक झोपडी बैठी रही झाली पसार कर।

ढूढा था हर कही मगर खुद म खुदा मिला,
देखा था हमने खुद म ही खुद को पुकार कर।

बिकते नही जा हम ता हम टूट लते वो,
मजबूरिया थी, बिक गए मामिक पगार पर।

इक पल वो जहा ठहरना यारो फिजूल था,
लौटे है वहा से भी हम सदिया गुजार कर।

आखो मे काच पीसकर वो लोग चल दिए
जो थक चुके थ, नीद का रस्ता बुहार कर।

गजल–34

जीते जी ये बोझ साँसों का उठाना ही तो था,
जिन्दगी को छोड़ फिर इक रोज जाना ही तो था।

कब तलक अफसोस करते दीये के बुझने का हम
रात तो गर ना सही, सूरज बुझाना ही तो था।

लिख दिया था मौत ने तकदीर पर जिस गीत को
गीत वह हमदर्द या दादर गुनगुनाना ही तो था।

जो नदी हरदम बनाती थी किसी एक गाँव को
जान का डर था हम पर घर बसाना ही तो था।

हर तरफ थे रास्ते पर थी नहीं मंजिल कहीं
इसलिए कुछ दूर चलकर लौट आना ही तो था।

सिर झुकाने के लिए हरगिज न हम तैयार थे
उनके हाथों इसलिए सिर को कटाना ही तो था।

गजल–35

हाथ ताजा खून से जिनके सुर्खतर हैं
लो वही इंसानियत के पक्षधर हैं।

आँधियों को है बहुत अफसोस इसका,
सिर उठा कर क्यों खड़े मिट्टी के घर हैं।

नाचता है साँप के फन पर सपेरा,
इस शहर के साँप भी कितने निडर हैं।

चीख सुन कर भी न कोई जान पाया
कट रहे जो लोग हैं या जानवर हैं।

भीड़ में कितने कमल हैं मत गिनो तुम
ये गिनो कि भीड़ में कितने मगर हैं।

लोग वे सोचेंगे अब सूरज का चेहरा,
जो दियों की लौ तलक से बेखबर हैं।

गजल—36

चाहत को अपनी बात म इजहार कीजिए
आवाज पहल अपनी वजनदार कीजिए।

क्या हाथ म तलवार लिए आप खड़े है
गर जीतनी है जग तो फिर वार कीजिए।

मजिल बनाना ही नही काफी है दास्ता
मजिल के लिए रास्ता तैयार कीजिए।

अपने असूला के लिए जीना जरूरी है
पर मौत भी आए तो स्वीकार कीजिए।

उड़कर के पार कीजिए या तो समदर को
या कि इस फिर तैर कर ही पार कीजिए।

ये भूलिए कि साथ म है फौज यारा की
अपने ही दम पे आप एतबार कीजिए।

गजल–37

हाथ म जिनके मुनहर हार थे
नोग वे दुर्भाग्य मे लाहार थे।

जो मिले थे बाग म जुगनू थ वो
कौन कहता है कि वा अगार थे।

वक्त ने जिनका हगाया था कभी
हम नही थे वा सिफ हथियार थे।

जिस जगह पर रोशनी अधी हुई,
उल्लुओ क उस जगह दरबार थे।

गिद्ध, कौए चील और कुत्ते न थे,
वो तो सबके सब हमार यार थे।

बिक रही थी उम्र सब्जी की तरह
जिस जगह पर जिस्म क बाजार थे।

डाक्टर का मारकर भाग थ जो,
लोग कहत है कि वा बीमार थ।

गजल—38

स्थिति उनकी बड़ी गम्भीर है,
पास म जिनके पराई पीर है।

दोस्त पाडव हैं हमार इसलिए,
हाथ मे फिर कौरवों के तीर है।

रोशनी रोशन प बाटी जाएगी
उल्लुओं की यह नइ तदबीर है।

रत का दरिया है उनक सामने
पाव म जिनके बधी ज जीर है।

जीतना या हारना तो बाद का
पर जा पहले हाथ मारे मीर है।

खुद जला जाता है शर्म से उस
कितनी बदकिस्मत बचारी हीर है।

गजल–30

वक्त ने जिनको किसी माड प माग हागा,
पास उनके कहा तिनके का महारा हागा।

यक्ष इक पल ता बड जार स कापी होगी,
मा ने जब चाद को गाली स उतारा होगा।

हा मका जो न मगा अपन ही घरवाना का
वा सगा किम तरह ए-दास्त तुम्हारा हागा।

मच से लाश उठाने की नहीं आज्ञा है
मबकी फरमाइश प यह दश्य दुबारा हागा।

जा भी हो चीज नही है वा ममन्दर जसी
जो समन्दर की तरह हागा तो खारा हागा।

गजल–40

मत पूछिए किस हद तक उमक में मग हूँ,
सूखी नदी के घाट की काई का रग हू।

इक क्षण को जरा गौर से पहचानिए हुजूर,
बलवे म कटे ग्रादमी का एक अग हू।

मर अधेर म जरा चल कर ता देखिए
जो पहुचती है रौशनी तक वा सुरग हू।

माफ़े को मेरी ब-वजह लानत न दीजिए
मैं खुद ब खुद माफ़ से टूटी इक पतग हू।

उस खत म कुछ भी तो नही लिखा है दास्ता,
कोने फटे का देखकर अब तक मैं दग हूँ।

मै भोगता हूँ यातना पर चीखता नही
मैं इस जुबा स दोस्ता बेहद ही तग हू।

गजल—41

जगत का नियम फिर से बदलना पड़ा हमें,
भेड़ों की चाल आज जब चलना पड़ा हमें।

ज्वालामुखी था सामने भीतर था समन्दर
हर हाल में भी दोस्त उबलना पड़ा हमें।

मरने के डर से खुदकशी करने लगे जो फूल,
काँटों की क्यारियों में तब खिलना पड़ा हमें।

जिनके महल में रौशनी का जिस्म था बिका,
उनके महल में उम्र भर जलना पड़ा हमें।

सूरज के साथ हम गए आकाश को छूने,
पर दिन ढले ही दोस्तो ढलना पड़ा हमें।

हम 'मेनका' के सामने बैठे थे ध्यान को,
मत पूछिए किस तरहा सँभलना पड़ा हमें।

गजल—42

कुछ ता फूट हुए मुकद्दर थ
और कुछ ~~ अपन अन्दर थ।

अपन भीतर जो देखा हमने कभी,
दूर तक रेत के समन्दर थे।

आईन क बन थे टूट गए,
किसको कहत कि दास्त पत्थर थे।

हमने पहना जि ह था काट समझ
वे सभी दोस्ती के अस्तर ये।

जो गुलाबा की महक देते थे
उनके सीन म कई नश्तर थे।

गजल–43

जिक्र आने ही वो गुनाहों का
नाम रटने लगा गवाहों का।

उसने पावों में बांध कर घुंघरू
फासला तय किया वफाओं का।

मैकदे से निकल के लोग कई
पूछते हैं पता गुफाओं का।

उस परिन्दे को खोज कर लाओ
मोड़ दे जो कि रुख हवाओं का।

गजल–44

जो जगह वक्त मे पुरानी थी
वो मर ि्न की राजधानी थी।

वक्त न क्या स क्या बना डाला
कितनी मासूम जि्दगानी थी।

उनक ख्वाबो म खिले गुलमोहर
जिनप मौसम की महरबानी थी।

जिस गली म लुट थे हम यारो
वो गली सबस खानदानी थी।

बद मुठठी म जिनके सत्ता थी
लाश उनको भी खु्द उठानी थी।

जो गजल वक्त ने नहीं गाई
वो हम वक्त का सुनानी थी।

गजल–45

झौंपडी जिनके लिए तुमने बनाई है,
हाथ मे उनके फक्त दियासलाई है।

जुड गया कानून से कितना सगा रिश्ता,
जेबकतरे बाप का बेटा सिपाही है।

अब अंधेरे की सिफारिश कर रहे है वो
इस शहर की रौशनी जिसने चुराई है।

भीड भगदड मे कुचल कर मर गया है जो,
हाथ मे उस शख्स के मा की दवाई है।

फाड कर फेंकी थी इक दिन जो गजल हमने
वह गजल फिर से किसी ने गुनगुनाई है।

खत लिखा है शहर से दादी को पोते ने,
आजकल वो शहर भर का घर जवाई है।

गजल–46

हम समझे अनुराग शहर की गलियां में
मगर छिपे थे नाग शहर की गलियां में।

बेच दिया सबने अन्दर के सूरज को
ढूँढा किए चिराग, शहर की गलियों में।

सदा सुहागिन बन कर नागिन बैठ गई,
लुटते रहे सुहाग शहर की गलियों में।

गांव छोड़ते वक्त, जख्म ऐसा पाया,
मिटा न पाए दाग शहर की गलियों में।

हैलो, टाटा बाय-बाय मांगे डीयर
सिर्फ बचा खटराग शहर की गलियां में।

धुएं से पहचान हुई पहले उनकी
फिर वे आए आग, शहर की गलियां में।

रिश्ता के पेड़ों पर बैठे कठफोड़े,
करते रहे सुराख शहर की गलियां में।

गजल–47

गाश जब-जब भी कोई लेकर के आया है
हमने ही उस नाश को कधा नगाया है।

जिन्गी का ग्रथ इक हमन भी ग्वाजा है
जिन्गी बस मौत का ग्राधा किगाया है।

रया कमायगा कोई इसान नौनत का
दद हमन दोस्तो जितना कमाया है।

भीड नाले की चमन म नेख वो गोला
गम लगता है किसी ने फिर गिराया है।

मय को मिफलिस हुई है चाद का टी वी,
दस शहर का इसनिए तम रास ग्राया है।

गजल—48

मत पूछिए मार गए ोगा को क्या मिला,
जिनके िए थे वो मरे उनको खुदा मिला।

हम जिस शहर म दवता को खोजत फिर
उस शहर म तो आदमी तक लापता मिला।

जिन मछलियो को मुछ मछेर मार कर लाए
उन मछलियो की लाश पर गाधी लिखा मिला।

जो रौशनी को उम्र भर भी खोज ना पाए
उनकी समाधि पर हम दीपक जला मिला।

वह खत जिस कासिद नही यमराज लाया था
उस खत प हमको रास्ता अपना पता मिला।

जो जि दगी भर वावफा बन साथ म चले,
आखिर उन्ही की ओर से हमको दगा मिला।

गजल–40

गम की दुनिया के जौहरी है कितने जान-मान हम
उनके भी गम से है वाकिफ जिनसे है बेगाने हम ।

जिन आँखों से हम पीते थे उन्हे मोतियाबिन्द हुआ
इसीलिए तो बदल रहे है रोज नये मैखाने हम ।

हाल और किन्ही हाथो मे टूट गए हाले अब तक
मन्दिरो से प्यासे है फिर निकल खड़े पैमाने हम ।

मन्दिर मस्जिद, गुरुद्वार और गिरजे नजर नही आये
हर जगह बस ! ढेख के लौटे है खाली तहखाने हम ।

माना रूप नही आकर्षित करता अंधी आँखो को
किन्तु कभी भी जजबातो मे नही रहे अनजान हम ।

देखा गर उसको होता तो साथ निभाना मुमकिन था,
किन्तु जिसे देखा ना कभी अब उसके है दीवाने हम ।

गजल–50

बीच हमारे केवल कुछ सासा की दूरी है
मगर नही मिल सकते है कैसी मजबूरी है।

ध्यान मगन कब से बैठे है हम अपने भीतर,
अब तक लेकिन क्यो अपनी हर साध अधूरी है।

गाव उजाडे है हमने ही अपने गीतो के
कि तु उजडना गीत नही यह दर्द जरूरी है।

पास खजूरो का जगल है भटक रहा है तन,
मन हर वृक्षा पर लिखता मौसम अगूरी है।

खोज रहा हूँ कब से तुमको मन के मरुथल म
और कहते हो तुम मृग म उसकी कस्तूरी है।

ढलती हुई शाम ने मर जम्मा का छूआ
फिर सूरज से कहा कि य तुमसा मि दूरी है।

गजल—52

तुम मेरी तकदीर में चाहो तो गम लिख देना,
आंखों में आंसू पलकों में मातम लिख देना।

हर चेहरे को हमने यूं तो मुस्कानें बांटी,
तुम अब चाहो तो पीड़ा की सरगम लिख देना।

हमने हर आंखों के सपनों का वसंत बांटे
तुम अब चाहो तो पतझड़ का मौसम लिख देना।

माना कि तकदीर ने हमको मरुथल ही सौंपे,
पर तुम चाहो तो नदियों का संगम लिख देना।

सिर्फ तुम्हारी कलम लिखेगी किस्मत के पन्ने,
अपने हाथों से जो भी चाहो तुम लिख देना।

गजल–53

रात का पहला पहर और मैं,
दर्द का लम्बा सफर और मैं।

जिन्दगी भर याद आओगे,
शाम! तुमको ये शहर और मैं।

कितने गम दिल में छुपाए हैं,
गाँव की बूढ़ी नहर और मैं।

आग का बुझना नहीं होगा,
धाम का मगर ये घर और मैं।

प्यार में हाजिर है कटने को,
लीजिए मेरा ये सिर और मैं।

कितनी गजलों को जन्म देंगे,
आपकी पहली नजर और मैं।

गजल–54

पृम के वृद्ध भौपडा की जिन्गी कहन ह वो,
आग तक का आजकन ता रौशनी कहते हैं वा।

प्यार का जा आत्मा स जाडते थे कन तलक,
दिल लगाने को भी अब ता दिल्लगी कहत हैं वो।

साथ म थे कल तनक जा धूप म माया हो ज्यो
आजकन उन तक ना यारा अजनबी कहते है वो।

अपने खाता म लिखी हैं गैर की रुसवाइया
क्या लिखा उनके लिए यह क्या कभी कहत है वा।

रीन की हड्डी तनक भी रख रहन जा जो रह
क्या पता उनको भा क्यो कर आदमी कहते हैं वा।

गजल–55

युद्ध में हम हारे होंगे मित्र न होंगे यार नए
हाथ अपाहिज हुए तो हमको भेंट मिले हथियार नए।

पांडव वही वही हैं कौरव वही मन्त्र है धर्मों का
किन्तु बचेगी नहीं द्रौपदी कृष्ण जो हैं इस बार नए।

सूरज से मुँह फेर दोस्तो खण्डहर बना कर क्या पाया,
चमगादड़ का वंश बढ़ाया गिद्धों के परिवार नए।

मेरे कद से बड़ी हुई जो धूप तुम्हारे आंगन में
बेच उसे मन्दिर-मस्जिद में लाए तुम अंधियार नए।

चीख-पुकारें लूट और हत्या दंगों में पैदा होकर,
जाने कैसे रह जाते हैं जिन्दा ये त्यौहार नए।

जिस्म परोसा है पत्तल में नंगा कर आजादी ने
चूमो चाटो, नाचो इसको ढूंढो फिर अधिकार नए।

गजल–56

देखेगा क्या राही और ?
कितनी बार तबाही और ?

या तो आँखें खुली न रख
या दे नई गवाही और।

चौराहे पर चोर मिला
होगा वही सिपाही और।

देख हथेली का अंतर
दाईं ओर तो बाईं ओर।

कहाँ मिलेगी भला बता
खून में मस्ती स्याही और।

भूखा है तो रोटी छीन
इसकी नहीं दवाई और।

गजल-57

रेंगे रेत व भरा अपनी थलि,
जिनको देनी थी सिर्फ श्रद्धांजलि।

रीढ़ की हड्डी गई जब टूट ता,
पहन आए माप की न कंचुकी।

गून मे माजे हैं उनके मुख तर,
जो कि पहने जूतियां हैं मखमली।

एक औरत ने जना है भेड़िया
इस खबर से शहर में है खलबली।

तार पर लटकी हुई चमगादड़ें
उल्लुओं से भी अधिक है दोगली।

सर सलामत देख कर मदन कहा
मूसली हारी या टूटी ओखली।

बिस्तरों पर रात जो नोची गई
थी किसी मजदूर औरत की कली।

गजल–58

इस शहर म शम्म निरापद न खोजो
यातना की दोस्तो सरहद न खोजो।

ओहदे ऊँचे बहुत उनके कभी थ
कि तु अब है लाश उनका पद न खोजो।

तुम पहाडो की बगल म चल रह हो
भूल कर भी इस समय तुम कद न खोजो।

कोई भी कायम नही अपनी जगह पर,
दास्तो ! इस शहर म जगह न खोजो।

सिफ आधी की जुटाओ तुम यवस्था
अब ढहान का काई बरगद न खोजो।

खु दकशी कानून तो कर ही चुका है
लाद कर तुम लाश अब ससद न खोजो।

गजल–59

देह दीवारो मे चिनवाते चलो
लाश कम्प्यूटर से गिनवाते चलो।

आयेगी इक्कीसवी इक दिन सदी
हड्डिया भूखो की बिनवाते चलो।

बिलबिलाते पेट मे बारूद भर
सीरियल टी वी के दिखलाते चलो।

गदगी मे ही कमल खिलते सदा
गदी बस्ती मे ये दोहराते चलो।

टैक्स रूई सा लगा कर पीठ पर,
चाबुको से उनको धुनवाते चलो।

गाव पर दो शहर की चरबी चढा
जगलो का गोश्त बटवाते चलो।

आग चूल्हे को मिले ना लाश को
गोलिया से जिस्म भुनवाते चलो।

गजल—60

छाव-गाव की नही यहा पर, तेज दुपहरी है
रिश्ता का तो नाम यहा पर मरी गिलहरी है ।

चिमनी के धूएँ से ज्यादा धूआ है मन म
कोलाहल बाहर है भीतर चुप्पी गहरी है ।

देखती मा इसीलिए तो दूध पिलात हो
अजगर से ज्यादा शहरी का बच्चा जहरी है ।

मच्छर जिनकी समझ रह हो वो मछुआर ह
मगरमच्छ के जाल सरीखी बनी ममहरी है ।

खेता और खलिहाना म जो रिश्त उगत है
उन रिश्ता क भाव-मात्र के लिए कचहरी है ।

चिकने-चुपडे सबोधन और शहद मिली वाणी
अब तो समझ गए हागे यह भाषा शहरी है ।

गजल–61

आती है उनको हमप बड़ी खीभ आजकल,
हम कल तलक नाचीज थ है चीज आजकल।

बजर हुई जमीन ह या ऋतु है बईमान,
उगत नही ह रोशनी के बीज आजकल।

सावन भी है भूने भी हैं मौजूद मुर्गाबिन,
फिर किसलिए मनती नही ह तीज आजकल।

मैं बुत अगर हूँ रास्ता मुझको जरा बता दो
जाता है मेरा दिल भी क्या पसीज आजकल।

वे मद ह तो बाकी उनको सिद्ध भी करें
क्या खोजत हैं नित नई तजवीज आजकल।

काटो न नक्ले को, सिर्फ खून देख कर
है माप के खू स रगी दहलीज आजकल।

गजल—62

काच के हम सवालात है
पारदर्शी खयालात हैं।

व थे भूख मरे इसलिए,
हम ये समझे कि सुकरात है।

जाना नोडा म रहकर के ये
पक्षियो क भी दिन-रात है।

िल से अहसास जो कर सको,
जगलो के भी जजबात हैं।

कैद पग-पग पे है जि्गी
रूह की हम हवालात हैं।

गर्दिशो मे है जो लड रहे
वक्त की वे करामात हैं।

गजल-63

अपनी आदत सुधार कर देखो
खुद के हाथों ही हार कर देखो।

सबके चेहरे उतारने वालो
अपना चेहरा उतार कर देखो।

वह जिसे खोजते हो मन्दिर में
उसको भीतर पुकार कर देखो।

फिर खिलने से पहले तुलसी के
अपना आँगन बुहार कर देखो।

ये जहाँ तुमको मान्यता देगा,
खुद को इक पल नकार कर देखो।

जानना चाहते हो पाप है क्या,
भूख का पल गुज़ार कर देखो।

गजल—64

तेज नाखून डर गई मुनिया
डूब पानी में मर गई मुनिया।

बूढ़ा बापू था पेड़ पीपल का
जिसकी शाखा से झर गई मुनिया।

साँझ लेकर के आई गो-धूलि,
जिसमें मिलकर बिखर गई मुनिया।

है किनारा की खोज अब तक भी
कितनी गहरी उतर गई मुनिया।

जब हवा पूछती है उसका पता
पेड़ कहते हैं घर गई मुनिया।

मरना घुटन से कहीं बेहतर है
मर के कितना निखर गई मुनिया।

- 16 मई 1955 को जन्म लेने के अतिरिक्त मेरे पास कोई चारा नहीं था
- शिक्षा का बोझ ढो नहीं पाया और आधी अधूरी शिक्षा लेकर सरकार के हाथों मासिक किश्तों में घटी दरों पर बिक गया
- सम्प्रति शिक्षा विभाग में पुस्तकालयाध्यक्ष हूँ
- "कवितायें लिखना बुरे दिनों का ऐश है" यह मान कर बचपन से ही कवितायें लिख रहा हूँ
- 'दर्द-ए-अंदाज़' के अतिरिक्त 'शवयात्रा स्वीकृतियों की', 'कैक्टस के फूल', 'सलीब पर टंगा सूरज' और 'मैं से तुम तक' काव्य संग्रह लिखे
- उपन्यास 'कफन की नीलामी', कहानी संग्रह 'अपना अपना अहसास' और 'अंधा अभिमन्यु' अभी तक प्रकाशकों की खोज में
- पता—सुरेन्द्र चतुर्वेदी
  कुंदन नगर, अजमेर (राजस्थान)